વિદ્વદ્વર્ય આચાર્યશ્રી કુંથુસાગરજી મહારાજવિરચિત

લઘુ

જ્ઞાનામૃત સાર

(પં૦ લાલારામજી કૃત હિંદી ટીકા ઉપરથી)

ભાષાંતર કરનાર :

કાન્તિલાલ નેમચંદ શાહ.

In. ...વાડવાળા,

શાહ આશાલાલ [illegible]

તરફથી મુનીશ્રી ૧૦૮ કુંથુસાગરજીના કેશલોચ

વખતે જ્ઞાનાવરણિ કર્મક્ષયાર્થે છપાવી પ્રસિદ્ધ કરી.

પ્રકાશક : ડૉ. ભાઈલાલ કપુરચંદ શાહ-નાર.

卐

પ્રત ૪૦૦

વીર સં. ૨૪૬૬ ફાગણ વદી ૮ સન ૧૯૪૦

મૂલ્ય—વાંચન અને મનન

વિદ્વદ્વર્ય આચાર્યશ્રી કુંથુસાગરજી મહારાજવિરચિત

લઘુ

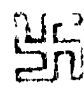
જ્ઞાનામૃત સાર

(પં૦ લાલારામજી કૃત હિંદી ટીકા ઉપરથી)

ભાષાંતર કરનાર :

કાન્તિલાલ નેમચંદ શાહ

દેલવાડવાલા



શાહ આશાલાલ એન્ડ શંકરલાલ દાંસવાળા તરફથી મુનીશ્રી ૧૦૮ કુંથુસાગરજીના કેશલોચ વખતે જ્ઞાનાવરણિ કર્મક્ષયાર્થે છપાવી પ્રસિદ્ધ કરી.

પ્રકાશક: ડૉ. ભાઈલાલ કપુરચંદ શાહ-નાર.



પ્રત ૪૦૦

વીર સં. ૨૪૬૬ ફાગણ વદી ૮ સન ૧૯૪૦

મૂલ્ય—વાંચન અને મનન

નિવેદન

વાંચકવૃન્દ ! જે આ પુસ્તક આપની સમક્ષ રજુ થઇ રહ્યું છે તે શ્રી ૧૦૮ શ્રી આચાર્ય કુંથુસાગર મહારાજની જ પ્રસાદી છે. અને તે હીંદી અર્થસહીત આચાર્ય (સ્વયં) વિરચિત "જ્ઞાનામૃતસાર"ના ટૂંક ઉતારારૂપ ગુજરાતી અનુવાદન છે. જે જૈન તેમજ જૈનેતર મનુષ્યોને સમજવામાં સહેલુ થઇ પડશે પણ આ પુસ્તકનું પ્રકાશન સાર્થક ત્યારે જ ગણાશે કે જ્યારે વાંચકવૃન્દ વાંચી. વંચાવી, મનન કરી. જીવનમાં ઉતારી આત્મકલ્યાણની શુભ ભાવના ભાવી તે માર્ગે જવાની નીતિ અખત્યાર કરશે, આશા છે કે આમાં સર્વ સંમત થશો.

આ પ્રકાશન પ્રગટ કરતા પહેલાં તેનું (હિંદી અર્થ ઉપરથી) ભાષાંતર કરવામાં તથા પુસ્તકની મૂળ રચના વખતે લખાણો ઉતારવામાં કાન્તિલાલ નેમચંદ શાહે (દેલવાડવાળાએ) જે પરિશ્રમ રૂપી ફાળો આપ્યો છે તે માટે ખરેખર તેમને અભિનંદન ઘટે છે. તે ઉપરાંત પુસ્તકનું સંશોધન કરવામાં સારી કચરાલાલ માણેકચંદ (ઓરાણવાલા) તથા મોતીચંદ પદમશી દોશીએ (ઉજેડીઆવાલાએ) જે પરિશ્રમ ઉઠાવ્યો છે તે માટે અત્રે તેમનો આભાર આલેખવામાં આવે છે.

લી. ભોગીલાલ મગનલાલ શાહ

श्रीमत्परम पूज्य तपोधान चारित्र्यभूषण परमविद्वद्वर्य आचार्य श्री१०८ कुंथुसागरजी महाराजके पुनित करकमलोमें

श्रद्धांजली

भगवान ?

आप जैसे महर्षि के पावन प्रसादसे आज भी आसेतु हिमाचलमें (दक्षिणसे लेकर उत्तर गुजरात तक) धर्म प्रवाहका संचार हो रहा है, आज के युगमें आचार्य शांतिसागर (दक्षिण) व आपश्रीके दिव्य विहारसे ही आज गुजरात आदि चिरंकालसे घोर अंधकारमें पडे हुओ देशोमें धर्मकी प्राचिन संस्कृति यत्रतत्र दृष्टिगोचर हो रही है. आपके हृदयकी गंभीरता अचल धीरता व शांतिप्रियताको देखने हुहे सचमुचमें आपके नामका सार्थक्य समज में आता है।

जिन्होंने भक्तिपूर्वक एक दफे आपका दर्शन कीया हो उनको आपकी महत्ता का परिज्ञान हुये बिना नहि रह शकता है (एक दफे आपकी सामने कोई क्रूर हृदयी शत्रु क्यों न आवे, आपकी शांत मुद्राको देखकर वह द्रविभूत हो जाता है.)

आप जैसे प्रातःस्मरणिय साधुवोंके दर्शन व वैयावृत्य के लीये हि नहीं नामोच्चरण करनेके लीये भी पूर्वोपार्जित पूण्यकी आवश्यक्ता है. यह सर्व साधारण के लीये सुगम नहि है.

पूज्य गुरुदेव ! आपश्रीने अपनि मुनि अवस्थामें उत्तर प्रांतके अनेक स्थानोंमें विहार कर धर्मकी जागृति

की है. गुजरात प्रांत जो कि चारित्र व संयमकी दृष्टिसे बहुत ही पछात था. अज्ञानतामें सड रहा था. उस प्रांतमें छोटेसे छोटे ग्राममें भी विहार कर लोगोंको धर्म में स्थीर कीया है. सुदासना स्टेट लींबज (ग्रांगद्रा स्टेट)-व अत्रुवा -पेथापुर माणकपुर-वलासना स्टेट आदी बडेबडे नरेंद्रोंने भी आपने राज्यशासनमें अहिंसादिक पालनेकी प्रतिज्ञा ली है. गुजरातमें बडेबडे राजामहाराजावोंके द्वारा आपका स्वागत हुआ और हो ही रहा है आपके द्वारा अभूतपूर्व धर्म प्रभावना हो रही है.

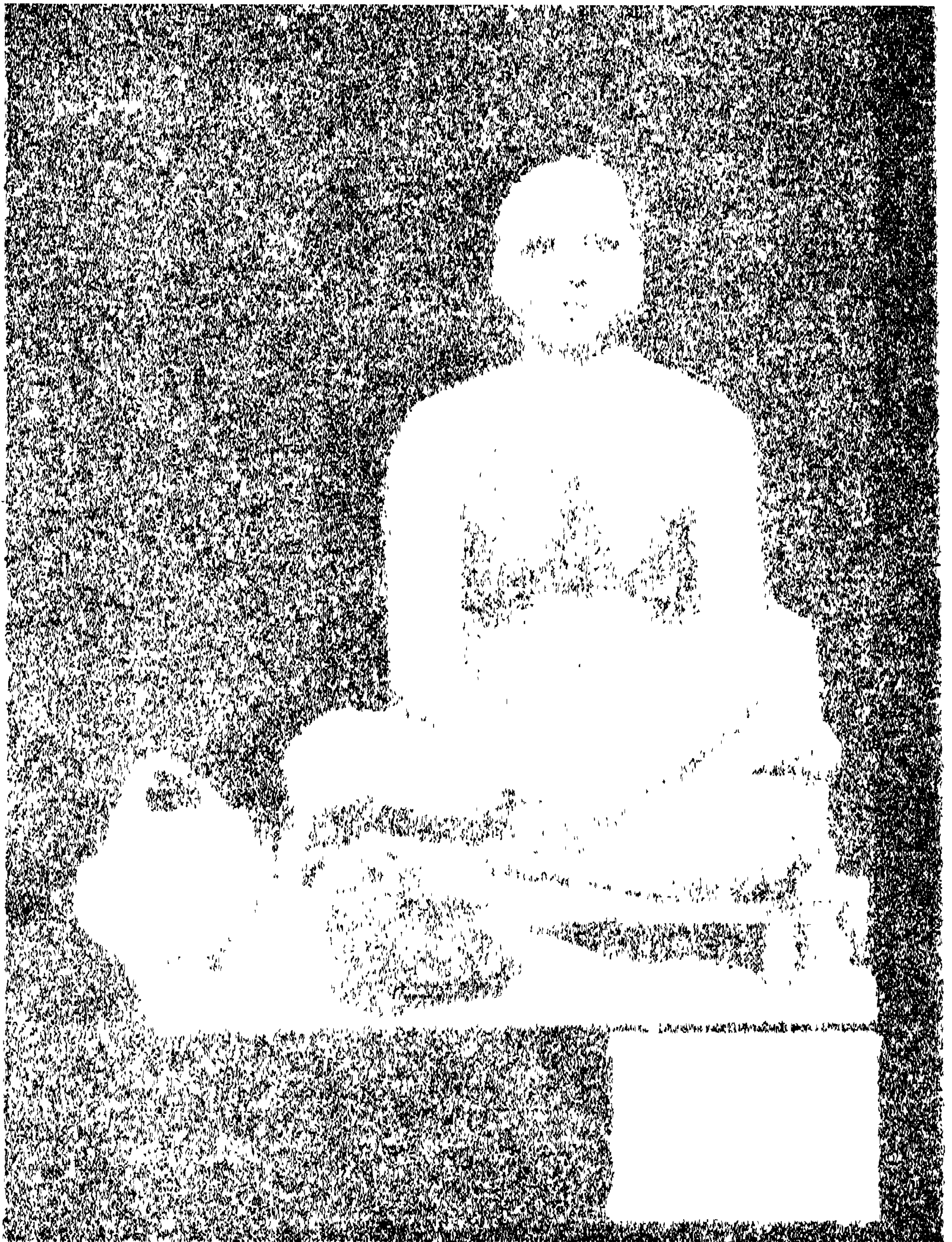
सचमुचमें हे भगवन्—

आपश्रीके पावन उपकारके लीये गुजरातके पाठकोंकी ओरसे आपके चरणोंमें श्रद्धांजली के सिवाय और क्या अर्पण कर शकते हैं ? आपश्रीने बोधामृतसार, निजात्म-शुद्धि भावना और मोक्षमार्ग प्रदीप. शांतिसागर चरित्र. चतुर्विंशति जिनस्तुति, ज्ञानामृतसार, शांतिसिंधु आदि अनेकों ग्रंथोंकी रचना कर स्वाध्याय प्रेमीयों पर महद् उपकार किया है. उससे भव्य वृंदको यथेष्ट लाभ हो रहा है और होगा. आपके यह ग्रन्थ " लघु ज्ञानामृतसार " आचंद्रार्क स्थायी रहे. यह श्रीपरम पावन देवाधीदेवके चरणोंमें नम्र विनंति है. अंतमें यह भावना रखता हु की आपके पवित्र चरण कमलोंकी भक्ति मेरे हृदयमें सदा बनी रहे.

ली. गुरुचरण सरोज चंचरिक

शाह भोगीलाल मगनलाल

जांबुडीवाला.



[illegible]

श्रीजगत्पूज्य तपोधन विद्वद्शिरोमणि प्रातः स्मरणीय आचार्य श्री १००८ कुन्थुसागरजी महाराज.

आपने बरौदा शहरके सुप्रसिद्ध "न्यायमंदिर" हालमें (करीब ५-६ हजारकी मेदनीमें) नेक नामदार दिवानसाहेब सर वी. टी. कृष्णमाचारी, केटी., सी. आई. ई. के अध्यक्षपदमें "विश्वधर्म" पर बडाही प्रभावशाली व्याख्यान दीया था.

ग्रंथ कर्ता का परिचय



महर्षि कुन्थुसागरजी महाराजने इस ग्रंथकी रचना की है। आप एक परम वितरागी, विद्वान मुनिराज है। आपकी जन्मभूमि कर्णाटक प्रान्त है जिसे पूर्वमे कितनेहि महर्षियोंने अलंकृत कर जैनधर्मका मुख उज्वल कियाथा। इसलीये ॥ कर्णेषु अटतीति " सार्थक नामको पाकर सबकें कानोमें गूंज रहा है।

कर्णाटक प्रांतके ऐश्वर्यभूत बेळगांव जिल्हेमें एनापुर नामक सुंदर नगर है। वहांपर चतुर्थकुलमे ललामभूत अत्यंत शांत स्वभाववाले सातप्पा नामक श्रावकोत्तम रहते है। आपकी धर्मपत्नी साक्षात सरस्वति समान सद्‌गुणसंपन्न थी। इसलीये सरस्वतिके नामसे ही प्रसीद्ध थी। सातप्पा व सरस्वति दोनों अत्यंत प्रेम व उत्साहसे देवपुजा गुरुपास्ति आदि सत्कार्यमें सदा मग्न रहते थे। धर्मकार्यको वे प्रधानकार्य समजते थे। उनके हृदयमें आंतरिक धार्मिक श्रद्धा थी। श्रीमती सौ. सरस्वतिने संवत २४२० में एक पुत्र रत्नको जन्म दिया। इस पुत्रका जन्म कार्तिक शुक्लपक्षकी द्वीतीयाको हुआ। मातापितावोंने पुत्रका जिवन सुसंस्कृत हो इससुविचारसे जन्मसे हि

आगमोक्त संस्कारोमे संस्कृत किया। जातकर्म संस्कार होने के बाद शुभ मुहूर्तमें नामकरण संस्कार किया जिससे ईस पुत्रका नाम रामचंद्र रखा गया बादमें चौल कर्म, अक्षराभ्यास, पुस्तक गृहण आदि आदि संस्कारोसे संस्कृत कर सद्वीद्याका अध्ययन कराया। रामचंद्रके हृदयमे बाल्कालसे हि विनय, शील व सदाचार आदि भाव जागृत हुए थे। जिसे देखकर लोग आश्चर्ययुक्त व संतुष्ठ होते थे। रामचंद्रको बाल्यावस्थामें हि साधु संयमियोंके दर्शनमें उत्कृष्ट इच्छा रहतीथी। कोई साधु एनापुरमें जाते तो यह बालक दौडकर उनकी वंदनाके लीये पहुचता था। बाल्यकालसे हि उसके हृदयमें धर्मकी अभिरुचि थी। सदा अपने सहधर्मिओंके साथ तत्वचर्चा करनेमे हो विताते थे। इस प्रकार सोलह वर्ष व्यतित हुए। अब मातापिताओंने रामचंद्रको विवाह करनेका विचार प्रगट किया। नैसर्गिक गुणसे प्रेरित होकर रामचंद्रने विवाहके लीये निषेध किया एवं प्रार्थना की कि पिताजी? इस लौकिक विवाहसे मुझे संतोष नहि होगा। मैं अलौकिक विवाह अर्थात मुक्तिलक्ष्मिके साथ विवाह कर लेना चाहता हुं। मातापिताओंकी आज्ञोल्लंघन भयसे इच्छा न होते हुए भी रामचंद्रने विवाहकी स्वीकृति दी। मातापितावोंने विवाह कीया। रामचंद्रको अनुभव होता था कि मैं विवाह कर बडे बंधनमे पड गया हुं।

विशेष विषय यह है कि बाल्यकालसे संस्कारोंसे सुदृढ होनेके कारण यौवनावस्थामें भी रामचंद्रको कोई व्यसन नहि था। व्यसन

था तो केवल धर्मचर्चा, सत्संगति व शास्त्रस्वाध्याय का था। बाकी व्यसन तो उससे घबराकर दूर भागते थे। इस प्रकार पच्चिसवर्ष पर्यंत रामचंद्रने किसि तरह घरमें वास किया परंतु विच विचमें यह भावना जागृत होती थी की भगवन ? मैं इस गृहबंधनसे कब छुटुं; जिनदिक्षा लेनेका भाग्य कब मिलेगा ? यह दिन कब मिलेगा जब कि सर्वसंगपरित्यागकर मैं स्वपरकल्याण कर शकुं। १

दैववशात् इसविचमें मातापितावोंका स्वर्गवास हुवा। विकराल कालकी कृपासे भाई ओर बहिनने भी विदाय ली.। तब रामचंद्रजीका चित ओर भीं उदास हुवा। उनका बंधन छुट गया। तब संसारकी अस्थिरताका उन्होंने स्वानुभवसे पक्का निश्चय करके और भी धर्ममार्ग पर स्थीर हुये। २

रामचंद्रके श्वसुर भी धनीक थे। उनके पास वहुत संपत्ति थी। परंतु उनको कोइ संतान नहि था। वे रामचंद्रसे कई दफे कहते थे कि यह संपत्ति (घर विगेरे) तुमही ले लो: मेरे यहांके सब कारोवार तुमही चलावो परंतु रामचंद्र अपने श्वसुरको दुःख न हो इस विचारसे कुछ दिन रहा भी। परंतु मनमनमें यह विचार किया करता था कि "मैं अपनी भी घरथार छोडना चाहता हुं। उनकीं संपत्तिको ले कर मैं क्या करुं। रामचंद्रकी इसप्रकारकी वृत्तिसे श्वसुरको दुःख होता था। परंतु राचंमद्र लाचार था। जब उसने सर्वथा गृहत्याग करनेका निश्चय हि कर लीया तो उनके श्वसुरको बहुत अधिक दुःख हुवा। जब आप घर छोड करके साधु हुये तब आपकी धर्मपत्नी

धर्मध्यान करती हुई घरमें रहगी।

आपने अपनी क्षुल्लक व एलक अवस्थामें बहुत ही धर्मप्रभावनाके कार्य किये है। संस्कारोंके प्रचारके लीये सतत उद्योग किया है। आपने मुनिअवस्थामें उत्तरप्रांतके अनेक स्थानोमें विहार कर धर्मकी जागृति की है। गुजरात प्रांत जो कि चारित्र व संयम कीं दृष्टिमें बहुत हि पीछे पडा था, उस प्रांतमें छोटेसे छोटे गांवमें भी विहार कर लोगोंको धर्ममे स्थिर किया है।

इसलिये आपमें स्वपर कल्याणकारी निर्मल ज्ञान होनेके कारण आप सर्वजनपूज्य हुए हैं। आपकी जीसप्रकार ग्रंथरचना कलामें विशेष गति है, उसीप्रकार वक्तृत्वकलामें भी आपको पूर्ण ज्ञान है। श्रोतावोंके हृदयको आकर्षण करनेका प्रकार, वस्तुस्थितिको निरूपण कर भव्योंको संसारसे तिरस्कार-विचार उत्पन्न करनेका प्रकार आपको अच्छी तरह अवगत है। आपके गुण, संयम आदियोंको देखने पर यह कहे हुवे विना नहि रह शकता कि आचार्य शांतिसागरजी महाराजने आपका नाम "कुन्थुसागर" बहुत शोच समजकर रखा है।

आपने अपनी माता सरस्वतिका नाम सार्थक बनाया है क्योंकी आप अपने नाम तथा काममें सरस्वति-पुत्रहि सिद्ध हुए हैं। चतुर्विंशति जिनस्तुति, शांतिसागर चरित्र, बोधामृतसार, निजात्म-शुद्धि भावना, मोक्षमार्ग प्रदीप, ज्ञानामृतसार, स्वरूपदर्शनसूर्य, नरेश-

धर्म दर्पण आदि नीतिपूर्ण तत्वगर्भित ग्रन्थरत्नो की उत्पत्ति आपके हि अगाधज्ञानरूपि खान से हुई है, हो रहि है ओर होती रहेगी।

आपके दुर्लभ संस्कृतभाषा-पांडित्य पर बडे २ विद्वान पंडित भी मुग्ध हो जाते है। आपकी ग्रंथनिर्माणशैली अपूर्व है। वर्णन-कौशल्य निराला है आगम विषयोंको आधुनिक ढंगसे स्पष्टिकरण करनेमें आप सिद्धहस्त है। आपकी भाषण-प्रतिभा शान्त व गंभीर मुद्राके सामने बडे २ राजाओंके मस्तक झुकते है। गुजरात प्रांतके प्राय: सभि संस्थानाधिपति आपके आज्ञाधारी शिष्य बने हुए है। अब तक हजारोंकी संख्यामें जैनेतर आपके सदुपदेशसे प्रभावित होकर मकारत्रय (मद्य, मांस, मदिरा) केनियमी व यमि बन चुके है। गुजरात प्रांतमें आपके द्वारा जो धर्मभावना हुई है व हो रही है व इतिहासके पृष्ठोंपर सुवर्णवर्णोंसे चिरकाल तक अंकित रहेगी। गुजरातमें कई संस्थानिकोंने अपने राज्यमें इन तपोधन के जन्मदिनके स्मरणार्थ सार्वजनिक छुट्टि व सार्वत्रिक अहिंसादिन मनानेके फर्मान निकाले है। सुदासणा स्टेटके प्रजावत्सल नरेश तो इतने भक्त बन गये है कि महाराजका जहां २ विहार होता है वहां प्राय: उनकी उपस्थिति रहती है कभि अनिवार्य राज्यकार्यसे परवश होकर महाराजसे विदा लेनेका प्रसंग आने पर माताको बिछुडते हुए पुत्रके समान नरेशकी आंखोंमेसे आंसु बहते है। धन्य है ऐसी गुरुभक्ति। युवराज कुमार साहेब रणजितसिंहजी पुज्यवर्यके परम भक्त है। वे कई समय महाराजकी सेवामे उपस्थित होकर आत्महित के तत्वोंके

पूछते हुए महाराजकी सेवामें ही (दीर्घ समय) व्यतीत करते है. । तारंगाजीसे महाराजका विहार होनेका समाचार जानकर कुमार साहेबसे रहा नहि गयाः वे पुज्यश्रीके चरणोंमे उपस्थित होकर (अश्रुपात करते हुए) महाराजसे निवेदन करते है कि स्वामिन ? पुनः कब दर्शन मिलेगा। कितनी अद्‌भूत भक्ति है यह। पुज्यश्रीने आज गुजरातमे जो धर्म जागृति की है वह "न भूतो न भविष्यति" है। गुजरातमें जैन क्या, जैनेतर क्या, हिन्दु क्या, मुसलमान क्या. उनके चरणोंके भक्त है। आज पुज्यश्रीका स्थान बहुत उंचा है। आपकी तपोमहिमाके लीये एक ही उदाहरण पर्याप्त होगा कि इस समय प्रायः सर्वत्र वर्षा न होनेसे दुर्भिक्ष पड रहा है। परंतु गुजरातमें यह दुर्भिक्ष नही है। यहां पर कविकी एक उक्ति सार्थक होती है कि:-

पद्मिनी राजहंसाश्च निर्ग्रन्थाश्च तपोधना: ।
यं देशमुपसर्पन्ति दुर्भिक्षं तत्र नो भवेत् ॥

आपभगवान समंतभद्र जिनसेनादिका स्मरण दिलाते है। ऐसे महा विभूतियों सेहि धर्मका मुख उज्वल होता है। ऐसे प्रातः स्मर्णिय पुज्य महर्षियोंके चरणोंमें अनन्त त्रिकाल नमोस्तु है।

आपके
चरण सरोज चंचरिक

डॉ. भाइलाल के. शाह–नार.

૨૨૨૨૧

વિદ્વદ્વર્ય આચાર્યવર્ય શ્રી કુંથુસાગરજી મહારાજ વિરચિત

"લઘુ જ્ઞાનામૃત સાર"

મંગલાચરણ.

ज्ञानभानुं जिनं नत्वा लोकालोक प्रकाशिकं ।
लघुज्ञानामृतसारं वक्ष्ये विज्ञानहेतवे ॥ १ ॥

લોક અને અલોકમાં રહેવાવાળા સર્વ પદાર્થોને જાણવાવાળા જ્ઞાનરૂપી સૂર્ય જીનેશ્વર ભગવાનને નમસ્કાર કરી સમ્યગ્જ્ઞાનને માટે હું (આચાર્યવર્ય કુંથુંસાગર મહારાજ) લઘુ જ્ઞાનામૃત સાર કહું છું.

પ્રશ્ન:—મંદીરમાં ભગવાનની સામે ઊભા રહીને શું શું વિચારવું જોઈએ?

ઉત્તર:—शुद्धप्रदौ ते चरणौ विहाय.
शुभाशुभेह भ्रमितोऽस्मि नित्यम ।
युग्मे ततस्ते पतितोऽस्मि शुद्धे,
क्षिप्तुं क्रमेणैव शुभाशुभं च ॥ २ ॥

હે ભગવાન, આપના ચરણ કમળ શુદ્ધ ભાવો આપવાવાળા છે. તેને છોડીનેજ હંમેશાં આજ સુધી હું (યાચનાર) શુભ (પંચેન્દ્રિયને માટે ઘણું સુખ આપનાર) અશુભ (ઘણું દુઃખ આપનાર પાપકૃત્ય એવા) ભાવોમાં પરિભ્રમણ કરતો રહ્યો છું. હે નાથ, હવે એટલા માટે હું અનુક્રમથી શુભ અશુભ ભાવોને છોડવા માટે શુદ્ધ ભાવો આપનાર એવા આપના ચરણ કમળમાં આવી પડ્યો છું એમ ભવ્યજીવોએ દિનપ્રતિદિન

મંદીરમાં ભગવાનની સામે ઉભા રહીને ચિંતવન કરવું જોઇએ. ચિંતવન કરવું જોઇએ એટલું જ નહિ પણ પાપકૃત્યને પ્રથમ છોડી દઇને પુણ્ય કાર્યમાં પ્રવૃત્તિ કરતાં કરતાં શુદ્ધપદને (મોક્ષને) પ્રાપ્ત કરવું જોઇએ.

પ્રશ્નઃ—હે સ્વામી, ભગવાનની પાસે શું શું માંગવું જોઇએ ?

ઉત્તરઃ—**कुंथुप्रभो मे शिव सौख्यसिद्धि,**
स्वात्मोपलब्धि परिणाम शुद्धि ।
बोधिं समाधिं कुरुनाय शीघ्र,
मन्यन्न याचे जिनराज किञ्चित् ॥ ३ ॥

હે જીનરાજ, હે પ્રભુ, હે કુંથુનાથ આપ મને (યાચનારને) મોક્ષ સુખની સિદ્ધિ કરાવો, મને શુદ્ધ આત્માની પ્રાપ્તી કરાવો, મારા પરિણામોની શુદ્ધિ કરો, મને રત્નત્રય (સમ્યગ્દર્શન, સમ્યગ્જ્ઞાન અને સમ્યક્ચારિત્ર ધારણ કરાવો અને હું ઉત્તમ ધ્યાન ધરૂં એવી બુદ્ધિ અને શક્તિ આપો. હે પ્રભુ આ સિવાય હું આપની પાસે સંસાર સંબંધી કાંઈ પણ વસ્તુ માગતો નથી.

હું સંસાર સંબંધી વસ્તુઓ ઘણા સમયથી પ્રાપ્ત કરી ચૂકયો છું. પરંતુ પૂર્વોક્ત ચીજો હજુ સુધી પ્રાપ્ત થએલ નથી. તેથી હું (યાચનાર) આપની પાસે પૂર્વોક્ત વસ્તુઓને માટે યાચના કરૂં છું કારણ કે દુનિયામાં એવી રીત છે કે જેની પાસે જે વસ્તુ છે તે બીજાને આપી શકે. ઝવેરી ઝવેરાત આપે અને કાપડીઓ કાપડ આપે. એ મૂજબ પૂર્વોક્ત ચીજો માટે આપની પાસે યાચના કરી છે.

પ્રશ્નઃ—भवन्ति भोगतृष्णाभिः तृप्ता जीवा न वा वद ।

હે ગુરૂદેવ, ભોગ તૃષ્ણાથી કોઈ પણ જીવ આ સંસારમાં તૃપ્ત થાય છે કે નહિ. તેનું નિરૂપણ કરો. આવી રીતે ભવ્ય જીવોના પૂછવાથી (ગ્રંથકર્તા) આચાર્યવર્ય નિમ્ન પ્રકારે યોગ્ય ઉત્તર આપે છે.

ઉત્તરઃ—હવે તૃષ્ણાનુ સ્વરૂપ કહેવાય છે.

भोगादितृष्णा भुवि यादृशं सा,
ददाति दुःखं विषमं नराय ।
व्याघ्रो न सिंहो न नरो न नारी,
केतुर्न राहुर्न गजो न चाश्वः ॥ ४ ॥

अग्निर्न सर्पो न च वैरिवर्गो,
व्याधिर्न चाधिर्न पिशाच वर्गः ।
तीव्रापि चापन्न च भूतसंघः
न तादृशं कोपि ददाति दुःखम ॥ ५ ॥

આ સંસારમાં ભોગાદિક તૃષ્ણા જેટલું દુઃખ આપે છે તેટલું ભયંકર દુઃખ વાઘ પણ આપી શકતો નથી, સિંહ, પણ આપી શકતો નથી, મનુષ્ય કે સ્ત્રી પણ આપી શકતી નથી, કેતુ અને રાહુ પણ આપી શકતા નથી, હાથી કે ઘોડો પણ આપી શકતો નથી, અગ્નિ પણ આપી શકતો નથી, સાપ પણ આપી શકતો નથી, શત્રુઓની સેના પણ આપી શકતી નથી, અનેક પ્રકારના બાહ્યરોગો પણ આપી શકતા નથી, અંતરંગ (અંદરના) રોગો પણ આપી શકતા નથી, પિશાચોનો સમૂહ પણ આપી શકતો નથી, મોટી મોટી આપત્તિઓપણ આપી

શકતી નથી અને ભૂતોનો સમૂહ પણ આપી શકતો નથી. ક્યાં સુધી કહું તૃષ્ણા જેટલું દુઃખ આપે છે તેટલું બીજી કોઈ પણ વસ્તુ આપી શકતી નથી.

इन्द्रादिकानां विभवान्वितानां,
तृप्तिर्न जाता विषयाद्धि यस्मात् ।
नराधमानां धनवर्जितानां,
तृप्तिः कुतः स्याद्भयदाद्धि तस्मात् ॥ ६ ॥

या दुग्धसिंधोर्जलपानतोऽपि,
तृषा न शांता विपुलात्कदाचित् ।
क्षुद्रस्य जंबालिकुपल्वलस्य,
पानात्कुतः शाम्यति शाम्य जल्कस्य ॥ ७ ॥

જે વિષયોથી મહાન વિભૂતિને ધારણ કરવાવાળા ઇંદ્રો નરેંદ્રો પણ તૃપ્ત થયા નથી તો પછી આ દરિદ્રિ મનુષ્ય કેવી રીતે તૃપ્ત થઇ શકે ! અનેક શોભાથી સુશોભિત ક્ષીરસાગર સમુદ્રનું પાણી પીવાથી જેની તૃષા (તરસ) મટતી નથી તેની તૃષા અત્યંત નાના અને હૃદયદ્રાવક ગંદા ઘડાનું પાણી પીવાથી કેવી રીતે શાંત થઇ શકે અર્થાત કદીપણ શાંત થઇ શકતી નથી.

देवादिकानामपि पुण्यभाजां,
भोगादितृष्णा विषमं हि दुःखम ।
ददाति लोके सततं परेषां,
कुकर्मभाजां खलु का कथात्र ॥ ८ ॥

ध्रुवं हि सर्वेप्य चलाश्चलन्ति,
भयंकरैर्यैः पवनैः क्षणाद्धि ।

वृक्षादिकानां बलवर्जितानां,
कथैव का तत्र वने विशाले ॥ ९ ॥

આ સંસારમાં ભોગાદિક તૃષ્ણા મહાપુણ્યવાન દેવ વગેરેને પણ હંમેશાં ઘોરાતિઘોર દુઃખ આપે છે તો પછી પુણ્યહીન–પુણ્ય વગરના મનુષ્યોનું તો પૂછવુંજ શું ! અરે કોઈ વિશાળ વનમાં જે ભયંકર પવનના વાવાથી ક્ષણવારમાંજ મોટો પર્વત પણ કંપી ઉઠે છે તો પછી નિર્બળ વૃક્ષ, છોડ વગેરેની હાલત શી !

ભાવાર્થ:—જેવી રીતે વાવાઝોડામાં વૃક્ષ વગેરે ટકી શકતાં નથી તેવી રીતે ભોગાદિક તૃષ્ણાથી (લાલસાથી) દરેક મનુષ્યને દુઃખ ભોગવવુંજ પડે છે. આકાશ પાતાળ એક થાય, સૂર્ય પૂર્વને બદલે પશ્ચિમમાં ઉગે (અસંભવીત હોવા છતાં પણ કદાચ સંભવીત બને) તો પણ તેમાંથી (ભોગાદિક તૃષ્ણામાંથી) તેઓ બચી શકતા નથી.

आपत्प्रकीर्णं नरजीवनं यत्,
ध्रुवं रुजाक्रान्तमिदं वपुश्च ।
क्रांतं सुतारुण्यवनं जराभिः,
कालेन चायुश्च तथाप्यभार्गा ॥ १० ॥

विनश्वरायापि सुखाय जीव,
भोगोपभोगैर्यतते सदैव ।
संतापशान्त्यै–विशतीह सोग्ना–
विग्नं विषं वात्यसुरक्षणार्थम् ॥ ११ ॥

આ મનુષ્યજીવન અનેક આપત્તીઓથી ભરપૂર છે, આ

શરીર પણ અનેક રોગોથી ભરપૂર છે, આ યુવાવસ્થા પણ વૃદ્ધાવસ્થાથી ઘેરાએલ છે, આ આયુ પણ કાળ અથવા મૃત્યુથી ઘેરાએલ છે, તોપણ આ અભાગી જીવ ભોગોપભોગોને વશ થઈને નાશવત્ સુખોને માટે હંમેશાં કરે છે. એવો મૂર્ખ જીવ દુઃખને શાંત કરવાના હેતુથી અગ્નિમાં પ્રવેશ કરે છે, અને પ્રાણોની રક્ષા કરવાના હેતુથી વિષ–(ઝેર) ખાય છે. કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે જેમ અગ્નિમાં પડવાથી પીડા મટતી નથી અને ઝેર ખાવાથી પ્રાણોની રક્ષા થઈ શકતી નથી એતો કેવળ મૂર્ખાઈજ છે તેમ ભોગરૂપી તૃષ્ણાથી જીવ કદીપણ તૃપ્ત થતો નથી.

अक्षोत्कराणां सुखशान्तिहेतोः–
भोगोपभोगं परिसेवते यः ।
नूनं स पण्डाविमुखो ऽग्निशान्त्यै.
ददादि वह्नोघृतहारिधारम् ॥ १२ ॥

कुटुंम्बिवर्गस्य सुसौख्यशांत्यै.
भोगोपभोगस्य च संचयं ये ।
कुर्वन्ति ते कल्पतरुं विभिद्य.
वपन्ति किंपाकतरोर्हि बीजम ॥ १३ ॥

જે મૂર્ખ પુરૂષ ઇંદ્રિયોને શાંત કરવા માટે ભોગોપભોગોનું સેવન કરે છે તે મૂર્ખ અગ્નિને બુઝાવવાના હેતુથી બળતામાં ઘી હોમે છે. અથવા જે પુરૂષ કુટુંબીઓને સુખ અને શાંતિ આપવા માટે ભોગોપભોગોનો સંચય કરે છે તે પુરૂષ કલ્પવૃક્ષને ઉખાડીને ઇંદરવરણા નામના ફળના બીજને વાવે છે અથવા ધંતુરાના બીજને વાવે છે.

देहावने वा विषयस्य भोगे.
धनार्जने वा स्वजये च कीर्तौ ।
दत्तावधनाः सततं यतन्ते,
त्यक्त्वा स्वधर्मं च जपं तपश्च ॥ १४ ॥

જે મનુષ્ય શરીરનું રક્ષણ કરવામાં, વિષયભોગોમાં, ફક્ત ધન ઉપાર્જન કરવામાં, અને પોતાની કીર્તિ અને વિજય મેળવવામાં પોતાનું ધ્યાન પરોવે છે તે મનુષ્ય આત્માના મુખ્ય ધર્મ જે આત્મશુદ્ધિ અથવા જપ અને તપ છે તેને છોડી દઈને વિષયોમાં હંમેશાં નિમગ્ન રહે છે.

स्वर्गमोक्षमूलं यजनादिदानं,
सुखं च कीर्तिर्विषयोपभोगाः ।
सर्वेपि नश्यन्ति गुणाः क्रमेण,
गतिर्विचित्रा विषयान्धजन्तोः ॥ १५ ॥

વળી જે વિષયભોગોમાં નિમગ્ન રહે છે તેવા પુરૂષના દાન અને પૂજા જે સ્વર્ગ મોક્ષના કારણરૂપ છે તે, તથા સુખ કીર્તિ વગેરે ગુણો નાશ પામે છે કારણ કે તેવા પુરૂષની દશાજ વિચિત્ર હોય છે.

तृप्तो भवेद्वारिलवेन वार्धिः,
काष्ठेन वह्निर्मरणेन कालः ।
तैलेन दीपः कृपणो धनेन,
तृप्तो न जन्तु विषयोपभुक्त्वा ॥ १६ ॥

આ સંસારમાં ભલે પાણીના ટીપાથી સમુદ્ર તૃપ્ત થઈ જાય, બળતણથી અગ્નિ તૃપ્ત થઈ જાય, મરણથી કાળ તૃપ્ત

થઈ જાય, તેલથી દીવા તૃપ્ત થઈ જાય તો પણ જીવ વિષય-ભોગોથી કદી તૃપ્ત થતો નથી.

तृष्णा स्वरूपं भवदं विचित्रं.
यज्जीवजतिः सुखशांतिहेतोः ।
श्री कुंथनाम्ना मुनिना यथावत्.
स्वानन्दतृप्तेन सता निरुक्तम् ॥ १७ ॥

પોતાના આત્મિક આનંદમાં તૃપ્ત રહેવાવાળા અને સજ્જન એવા કુંથુસાગર નામના આચાર્ય મુનિમહારાજે સમસ્ત જીવોને સુખ અને શાંતિ આપવાને માટે આ સંસારનાં દુઃખો આપવાને માટે આ સંસારનાં દુઃખો આપવાવાળી અને અત્યંત વિચિત્ર એવી તૃષ્ણા (લાલસા)નું પરિપૂર્ણ રીતે નિરૂપણ (વર્ણન) કર્યું છે.

પ્રશ્નઃ—**तृप्यन्तेऽमी गुरो जीवा वद मे केन वस्तुना ।**

હે ગુરૂદેવ, ભોગતૃષ્ણાથી જીવો તૃપ્ત થતા નથી તો પછી કઈ વસ્તુથી તૃપ્ત થાય છે તે કહો.

ઉત્તરઃ—**ज्ञानामृतेनैव भवन्ति तृप्ताः.**
जवेनमुक्ताः खलु जन्ममृत्योः ।
ज्ञात्वेति भव्याश्च पिबन्तु नित्यं,
ज्ञानामृतं मिष्ठतरं यथेष्टम् ॥ १८ ॥

જો આ સંસારમાં જીવ તૃપ્ત થતો હોય તો સમ્યગ્જ્ઞાન રૂપી અમૃત પીવાથી જ—(મેળવવાથી જ) થાય છે. ફક્ત તૃપ્ત થાય છે એટલુંજ નહિ પણ જન્મ મરણ રૂપી ઘોરાતિ ઘોર દુઃખોથી મુક્ત થાય છે, એવું જાણીને હે ભવ્ય જીવો અહિ

પ્રમાદ વગેરેને છોડી દઇને હંમેશાં ઇચ્છા મુજબ સમ્યગ્જ્ઞાન રૂપી અમૃતનું પાન કરો.

પ્રશ્નઃ—विज्ञानहीनजीवाः कौ भान्ति न वा गुरो वद ।

હે ગુરૂદેવ, સમ્યગ્જ્ઞાન હીન જીવો આ પૃથ્વીમાં શોભે તેવા નથી તે વિષે મને કહો.

ઉત્તરઃ—न भाति शीर्षंनतिनम्रहीनं,
हिनश्च नेत्रं निजदर्शनेन ।
न भाति नासा परगन्धलीना,
सत्येन शून्या मधुरापि वाणी ॥ १९ ॥

દેવ, ગુરૂ અને શાસ્ત્રને નમસ્કાર કરવામાંજ તથા તેમનો વિનય કરવામાંજ મસ્તકની શોભા છે તે સિવાય મસ્તકની શોભા નથી, આત્મદર્શન થયા સિવાય નેત્રની શોભા નથી, આત્મિક ગંધ સિવાય બાહ્ય ગંધથી (ફળ ફુલ વગેરેની ગંધથી) નાસિકા (નાક)ની શોભા નથી અને મધુર વચન હોવા છતાં સત્યરહિતની વાણી પણ શોભાને પાત્ર નથી.

हीनं प्रभोर्वै स्तवनेनन्चास्यं,
श्रोत्रं न भाति श्रुतिशास्त्रशून्यं ।
न भाति कण्ठो परगीतलीनो,
दानादिसेवारहितो न हस्तः ॥ २० ॥

પ્રભુના (જીનેંદ્રદેવના) ગુણગાન સિવાય મુખ બારની માફક શોભતું નથી, શાસ્ત્ર પુરાણને સાંભળ્યા સિવાય કાન સાપના દરની માફક શોભતા નથી, પરવસ્તુના (લગ્નાદિક પ્રસંગે ફટાણાં ગાવામાં તથા પુત્ર, ધન વગેરેના લોભથી કુગુ-

વાદિક—રાગદ્વેષસહીત એવા ગુરૂઓની—સેવા માટે) ગુણગાન કરવામાં તત્પર હોય એવા કણ્ઠની પણ શોભા નથી. અને દાન, પૂજા વગેરે કર્યા સિવાય હાથની શોભા નથી.

सुर्तार्थबित्या रजसा न लिप्तौ,
पादौ न कुक्षिर्विधि न पुष्टा ।
न भाति जिह्वा स्वरसेन शून्या,
ह्यमुत्र चर्चा रहितो न देशः ॥ २१ ॥

જેના પગને તીર્થભૂમિની ધૂળ પણ સ્પર્શી શકી નથી (અડી નથી) તેના પગ આ દુનિયામાં શોભાને પાત્ર નથી. ભક્ષાભક્ષના ભેદને જાણ્યા સિવાય જે જીવે પેટ ભરીભરીને મોટું બનાવ્યું છે તેનું પેટ આ દુનિયામાં શોભાને પાત્ર નથી, અનંત કાળ સુધી જે જીભે બાહ્ય (ખાટો, મીઠો, કડવો, કસાયલો, તુરો વગેરે) રસો ચાખી લીધા પણ જ્યાં સુધી તે જીભ પણ શોભાને પાત્ર નથી અને જે ઉન્નતિમય દેશમાં પરલોકની (જીવ મરીને કયાં કયાં જશે, શું શું ભોગવશે, શું કરવાથી છુટી શકે અને પુણ્ય, પાપ તથા મોક્ષ વગેરેની) ચર્ચા થતી નથી તે દેશ પણ શોભાને પાત્ર નથી.

नीत्याविहीनं न च भाति शौर्यं.
धर्मेणहीनोखिलविश्वनेता ।
सदोपपक्षा चतुरोपि वक्ता,
स्वार्थी कदाचित् न भाति पापी ॥ २२ ॥

નીતિરહિત પરાક્રમ શોભાને પાત્ર નથી (કારણ કે ન્યાય અન્યાય સમજીને જ પરાક્રમ કરવું જોઇએ એ બુદ્ધિમાનની નીતિ છે.) નેતાની ફરજ છે કે ધર્મ પાળવો અને પળાવવો.

પણ જે દુનિયાનો નેતા હોવા છતાં પણ ધર્મથી વંચિત છે (રહિત છે) તે નેતા પણ શોભાને પાત્ર નથી. ચતુર વક્તા હોય અને હું કહું છું તેજ સત્ય છે એમ માને તો તે શોભાસ્પદ નથી. (પણ સત્ય એજ મારૂં છે એમ કહેનાર ચતુર પુરૂષ શોભાને પાત્ર છે) અને સ્વાર્થી હંમેશાં પાપી હોવાથી મોટી મોટી પદવીને ધારણ કરવા છતાં પણ શોભાને પાત્ર નથી.

न भाति भोगो धनहीनजन्तोः
आज्ञा दरिद्रस्य खलस्य वार्ता ।
प्रमादिजस्तो न नृजन्मरत्नं,
न भाति राजा समदृष्टिहीनः ॥ २३ ॥

ધન રહિત (નિર્ધન) મનુષ્યના ભોગોપભોગો શોભાને પાત્ર નથી, (ધન સિવાય ભોગોપભોગો મેળવી શકતો જ નથી), દરિદ્ર (ગરીબ) માણસની આજ્ઞા પણ શોભાને પાત્ર નથી (કોઇ માનતું જ નથી.) દુષ્ટ મનુષ્યને વૃતાંત પણ શોભાને પાત્ર નથી (કોઇ સાંભળતું જ નથી) નરજન્મરૂપી રત્ન પ્રમાદરહિત હોવું જોઇએ પણ જે મનુષ્ય નરજન્મરૂપી રત્ન મેળવીને પ્રમાદમાં અંધ બનેલો છે તેનું નરજન્મરૂપી રત્ન શોભાને પાત્ર નથી. (અંધ મનુષ્યની માફક રત્નને લઇને કુવામાં પડવા જેવું છે.) અને પ્રજાને પુત્ર સમાન ગણ્યા સિવાય રાજા શોભાને પાત્ર નથી.

विज्ञानहीनस्य नराधमस्य,
तथा वपुर्नैव विभाति वाणी ।
भक्तिर्न शक्तिर्न च वेषभूष,
व्रतोपवासो जपस्तपादि ॥ २४ ॥

જેવી રીતે પૂર્વોક્ત સમ્યગ્જ્ઞાનરહિત મનુષ્ય શોભાને પાત્ર નથી તેવી રીતે જે મનુષ્ય સમ્યગ્જ્ઞાન અને વિવેકથી રહિત છે તેની વાણી મીઠી હોવા છતાં પણ, સુંદર શરીર ધારણ કરવા છતાં પણ, ભક્તિમાં તત્પર રહેવા છતાં પણ, શક્તિ હોવા છતાં પણ અને અનેક પ્રકારના વસ્ત્રાલંકાર ધારણ કરવા છતાં પણ તે શોભાને પાત્ર નથી તથા તેનાં વ્રત, ઉપવાસ, જપ તપ વગેરે પણ શોભાને પાત્ર નથી.

પ્રશ્નઃ—तज्ज्ञानं कीदृशं स्वामीन्तल्लक्षणं तथा वद ।
यत्प्राप्य कामदं वस्तु लभन्ते मोक्षमंदिरम् ॥ २५ ॥

હે ગુરૂદેવ, જે જ્ઞાન મેળવીને મનવાંછીત વસ્તુ મેળવાય અને મોક્ષરૂપી મહેલ પણ ભવ્યજીવોને પ્રાપ્ત થાય તે જ્ઞાન કેવું છે તે, અને તે જ્ઞાનનું લક્ષણ શું છે તે કૃપા કરીને કહો. (ભવ્યજીવ પૂછે છે)

ઉત્તરઃ—સમ્યગ્જ્ઞાનનુ સ્વરૂપ

व्ययोद्भवध्रौव्ययुतं पदार्थं,
पंचास्तिकायादि यथार्थ वस्तु ।
जिनोक्ततत्वं सुखशांतिमूलं,
षड्द्रव्यमेवं परमार्थभूतम् ॥ २६ ॥
जानाति मुक्त्वा त्रिविधं हि दोषं,
ज्ञानं प्रणीतं च तदेव सम्यक् ।
तमः प्रणाशि स्वपरप्रकाशि,
प्रदीपवद्धा प्रतिभाति लोके ॥ २७ ॥

જીનેંદ્ર ભગવાનથી કથિત તથા ઉત્પાદ (ઉત્પન્ન થવું),

વ્યય (નાશ પામવું), અને ધ્રૌવ્ય (કાયમપણું) એ ત્રણે ગુણોથી સુશોભિત છ દ્રવ્યો આ સંસારમાં છે. અથવા ખરેખરી રીતે યથાર્થ સ્વરૂપને પ્રગટ કરવાવાળાં પાંચ અસ્તિકાય (એક પ્રદેશથી વધારે પ્રદેશવાળાં જે દ્રવ્યો છે તે) છે, અથવા સુખ અને શાંતિ આપવામાં કારણભૂત અને સાચા એવા નવ પદાર્થો છે, એ સર્વેને જે શંકા, વિપરીત (ઉલટું સમજવું) અને ભ્રાંતિ (વસ્તુનું અસ્તિત્વ છે પણ કઈ વસ્તુ છે તેનો ખુલાશો થતો નથી તે) એ ત્રણે દોષથી રહિત થઈને જે જાણે છે તેને સમ્યગ્જ્ઞાન કહે છે. તે સમ્યગ્જ્ઞાન અજ્ઞાનરૂપી અંધકારને દૂર કરવાવાળું છે. અને દીવાની માફક પોતાના અને પરવસ્તુના સ્વરૂપને પણ પ્રકાશિત કરવાવાળું છે. એવું એ સમ્યગ્જ્ઞાન આ સંસારમાં હમેશાં શોભાયમાન રહે છે. (એવું જ્ઞાન મેળવવા પ્રયત્ન કરવો જોઈએ. જેથી આત્માનું કલ્યાણ થાય.)

दृग्बोधचारित्रमयो निजात्मा,
स्वानन्दभाग् रक्ष्यत एव येन ।
संसारसिंधुः परिलध्यते वा,
निरुध्यते कर्मकषायचौरः. ॥ २८ ॥
निजात्मशुद्धिः क्रियते स्वर्भिर्द्धिः,
देहात्मवुद्धिः परिवर्ज्यते हि ।
ज्ञानं तदेवास्ति यथार्थ रूपं,
ग्राह्यं यथा वांच्छितदं स्वराज्यम् । ॥ २९ ॥

જે જ્ઞાનથી પોતાના આત્માથીજ ઉત્પન્ન થએલ આનંદને ધારણ કરવાવાળા સમ્યગ્દર્શન, સમ્યગ્જ્ઞાન અને સમ્યક્ચારિત્ર-મય એવા પોતાના આત્માનું રક્ષણ થાય છે, સંસારરૂપી સમુદ્ર

તરી જવાય છે, કર્મ અને કષાયરૂપી ચોર રોકી દેવામાં આવે છે, પોતાની આત્માશુદ્ધિ ાય છે અને શરીર એજ આત્મા છે એવી વિપરીત બુદ્ધિ ત્યાગી દેવામાં આવે છે તેનેજ સંપૂર્ણ સમ્યગ્જ્ઞાન કહે છે. તે જ સમ્યગ્જ્ઞાન ઇચ્છા મુજબ (કામધેનુની માફક) ફળ આપવાવાળું છે. તેથી ભવ્યજીવોએ સ્વરાજ્ય (મોક્ષ) મેળવવામાં કારણભૂત એવા આ જ્ઞાનને મેળવવું જોઇએ અને ધારણ કરવું જોઇએ.

विहन्यते क्रोध च लुष्टयं च,
येन क्षणान्मोहरिपुः प्रचण्डः ।
प्रतन्यते शांति सु ं ययेष्टं,
मैत्री प्रमोदः परिवर्ध्यते वा ॥ ३० ॥
निरुध्यते चित्त चकोर पक्षी,
निश्चियते स्वात्म सुखं स्वधर्मः ।
ज्ञानं तदेवास्ति सदा पवित्रः
ग्राह्यं वरं मोक्षपदं यथैव ॥ ३१ ॥

જે જ્ઞાનથી પળવારમાં જ ક્રોધ, માન, માયા અને લોભનો નાશ થઈ શકે, જે જ્ઞાનથી મોહરૂપી પ્રબલ શત્રુનો પણ પળવારમાં જ નાશ થઇ શકે, જે જ્ઞાનથી ઇચ્છા મુજબ શાંતિ તથા સુખ મેળવી શકાય, જે જ્ઞાનથી સંપૂર્ણ જીવો પર મિત્રતા અને ધર્માત્મા ગુણી પુરૂષોને જોઇને (દેખીને) અતિશય ઉલ્લાસમાં આવી જવું. તથા સેવા કરવાનું મન થઈ જવું વગેરે ગુણોની વૃદ્ધિ થાય, જે જ્ઞાનથી મનરૂપી ચંચળ પક્ષી પણ રોકી શકાય, અને જે જ્ઞાનથી પોતાનું આત્મિક સુખ અને પોતાના આત્મિક ધર્મનો પણ નિશ્ચય થઇ શકે તેનેજ પવિત્ર

જ્ઞાન કહે છે. જેવી રીતે સર્વોત્કૃષ્ટ મોક્ષપદ મેળવવું જરૂરી છે તેથી તેને ધારણ કરવા પ્રયત્ન કરવો જોઇએ.

निजान्यजन्तो र्विषमं च दुःखं,
प्रणश्यते येन भवस्य बधः ।
ज्ञानामृतं पीयत एव मिष्टं,
प्रसार्यते येन यशस्त्रि लोके ॥ ३२ ॥
दयार्द्र बुद्धि र्भवभीति हर्त्री,
प्रवर्त्यते कौ करुणा कृपादिः ।
ज्ञानं तदेवास्ति परं पवित्रं,
ग्राह्यं सदा जैनमतं यथैव ॥ ३३ ॥

જે જ્ઞાનથી પોતાનાં અને અન્ય જીવોનાં ઘોરાતિઘોર દુઃખોનો નાશ થાય, જે જ્ઞાનથી આત્માની સાથે મિશ્રિત મીઠા જ્ઞાનરૂપી અમૃતનું પાન થઇ શકે, જે જ્ઞાનથી પંચપરિવર્તનરૂપ સંસારનાં બંધનો તોડી શકાય, જે જ્ઞાનથી ત્રણે લોકોમાં કીર્તિ પ્રસરે, જે જ્ઞાનથી સંસારના દરેક ભયંકર ભયને દૂર કરવાવાળી દયામય બુદ્ધિ ઉત્પન્ન થાય, અને જે જ્ઞાનથી આ પૃથ્વિ ઉપર દયા અને કૃપાની ભાવના સર્વત્ર વ્યાપી રહે તેજ જ્ઞાનને પવિત્ર જ્ઞાન કહે છે. જેવી રીતે મોક્ષ મેળવવા માટે જૈનમત (રાગદ્વેષને જીતવાવાળો=जिन અને તેનો મત= જૈનમત) ગ્રહણ કરવો જોઇએ તેવી રીતે આત્મકલ્યાણ માટે પવિત્ર જ્ઞાનને ગ્રહણ કરવું જોઇએ.

दुःखप्रदस्यप्यत्यहितस्य येन,
त्यागो भवेन्मानमतंमूर्तैः ।
हितेप्रवृत्तिः स्वरसे हि तृप्तिः,
निज प्रदेशे गमनं मनोज्ञे ॥ ३४ ॥

रत्नत्रयं सौख्यमये निवासो,
भवेत्समूला कृत कर्म हानिः ।
ज्ञानं तदेवाम्नि च सेवनीयं,
यथा जिनोक्तं शिवदं हि तत्वम् ॥ ३५ ॥

જે જ્ઞાનથી મહાન દુઃખ આપનાર મિથ્યાત્વ વગેરે અહિત કરનાર વિપરીત ભાવોનો સર્વથા ત્યાગ થઈ શકે, જે જ્ઞાનથી માનરૂપી મદોન્મત હાથીનો ત્યાગ થઈ શકે, જે જ્ઞાનથી આત્મકલ્યાણમાં પ્રવૃત્તિ થાય અને પોતાના આત્મિક રસમાં તૃપ્ત રહેવાય, જે જ્ઞાનથી મનોહર આત્મપ્રદેશોમાં વિચરવાનું થાય, જે જ્ઞાનથી અનંત સુખમય રત્નત્રયમાં રહેવાનું થાય અને જે જ્ઞાનથી કરેલ કર્મોનો સર્વથા ક્ષય થઈ જાય તેનેજ સમ્યગ્જ્ઞાન (સાચું જ્ઞાન) કહે છે. જેવી રીતે ભગવાન જીનેંદ્રદેવથી કથિત અને મોક્ષ આપવાવાળા શુદ્ધાત્મતત્વની સેવા કરવામાં આવે છે. તેવીજ રીતે તે સમ્યગ્જ્ઞાનની સેવા કરવી જોઈએ.

घोरातिघोरं विविधं तपो हि,
सदैव कुर्वन्नपि मूर्खजीवः ।
न मुच्यते कर्म कलंक जालैः,
यथा वनैरन्धनरोपि गच्छन् ॥ ३६ ॥
गतस्पृहं स्वल्प तपोपि कुर्वन्,
ज्ञानी मुनिः कर्मकलंक जालैः ।
प्रमुच्यतेर्हन्नवि घातिघती,
क्षुधा पिपासादि समस्तदोषै ॥ ३७ ॥

જેવી રીતે જન્મથીજ આંધળો માણસ વનમાં રખડતો હોવા છતાં પણ વનમાંથી દૂર થઈ શકતો નથી, તેવી રીતે

અજ્ઞાની અથવા જેને નિર્મળ આત્મજ્ઞાન નથી એવો મનુષ્ય અનેક પ્રકારનાં ઘોરાતિઘોર તપશ્ચરણ કરવા છતાં પણ કર્મરૂપી જાળમાંથી કદી પણ છૂટી શકતો નથી. આ પ્રમાણે આત્મજ્ઞાની મુનિ દરેક પ્રકારની ઇચ્છાઓથી વિરક્ત થઇને થોડું પણ તપશ્ચરણ કરે તો જેવી રીતે ઘાતીયાં કર્મોને (જ્ઞાનવરણિ, દર્શનાવરણી, મોહનીય અને અંતરાય એ ચાર કર્મોને) નાશ કરવાવાળા અરહંત ભગવાન ભૂખ, તૃષા વગેરે સમસ્ત દોષોથી છૂટી જાય છે તેમ તે કર્મરૂપી જાળથી છૂટી શકે છે.

धर्मार्थकार्ये स्वपरोपकारे,
वाऽज्ञाननाशे निजसाधनेपि ।
व्यये कृतेपीति विवर्द्धते वा-
ऽव्ययेन शीघ्रं खलु नश्यतीह ॥ ३८ ॥
चोरैश्च भूपैर्जन बंधुमित्रै-
र्न भज्यते ज्ञानधनं कदापी ।
एतादृशं ज्ञानधनं चिनोति,
स एव धीमान् स च धीरवीरः ॥ ३९ ॥

આ જ્ઞાનરૂપી ધનનો જો ધર્મની વૃદ્ધિના કાર્યોમાં સદુપયોગ કરવામાં આવે, અથવા પોતાના અને અન્યજીવોના આત્મકલ્યાણાર્થે ઉપયોગ કરવામાં આવે, અથવા અજ્ઞાનરૂપી અંધકારને દૂર હટાવા માટે ઉપયોગ કરવામાં આવે. અથવા આત્મશુદ્ધિ પ્રાપ્ત કરવા માટે ઉપયોગ કરવામાં આવે તો તે જ્ઞાનરૂપી ધન ખરેખર પરિપૂર્ણ રીતે વિકસે છે (વધતું રહે છે). જો તેનો કોઇપણ કાર્યમાં ઉપયોગ કરવામાં ન આવે તો તે અવશ્ય તરતજ નાશ પામે છે. આ જ્ઞાનરૂપી ધનને ચોર

ચોરી શકતો નથી, રાજા જોહુકમીથી છીનવી શકતો નથી અને ભાઇ, મિત્ર, પુત્ર વગેરે કુટુંબીઓ પરસ્પર વહેંચી શકતા નથી. એવા આ જ્ઞાનરૂપી ધનનો જે મનુષ્ય સંચય કરે છે તેજ મનુષ્ય બુદ્ધિમાન અને ધીરવીર ગણાય છે.

सुज्ञानतुल्यः सुखदः पवित्रः,
गुणप्रदो दुःखहरो महांश्च ।
अज्ञानहारी निजबोधकारी,
संसारतारी निज सौख्यकारी ॥ ४० ॥
समस्त सौभाग्य विवर्द्धकारी,
स्वानन्ददायी परोपकारी ।
तत्वप्रकाशी च तमोविनाशी,
नैवास्ति लोके ह्यपरः पदार्थः ॥ ४१ ॥

આ સંસારમાં શ્રેષ્ઠ જ્ઞાન સમાન બીજો કોઈપણ પદાર્થ સુખ આપવાવાળો નથી, પવિત્ર નથી, ગુણ આપનાર નથી. દુઃખોને નાશ કરનાર નથી, સર્વોત્કૃષ્ટ નથી, અજ્ઞાનરૂપી અંધકારને (જેનાથી આત્મકલ્યાણ થઇ શકતું નથી તેને) નાશ કરવાવાળો નથી, આત્મજ્ઞાનને પ્રગટ કરવાવાળો નથી, આ દુઃખદ સંસારમાંથી પાર ઉતારનાર નથી. આત્મિક સુખ આપનાર નથી, સમસ્ત સૌભાગ્યની વૃદ્ધિ કરવાવાળો નથી, તત્વોને પ્રકાશીત કરવાવાળો નથી અને અજ્ઞાંધકારને નાશ કરવાવાળો નથી.

ભાવાર્થ:—આ દરેક કામ સમ્યગ્જ્ઞાનથી થઈ શકે છે તે માટે ઘણાં દુઃખો પડવા છતાં પણ સમ્યગ્જ્ઞાનને પ્રાપ્ત કરવું જોઇએ.

राजा स्वदेशे स्वगृहे कुपुत्रः, (सुपुत्र :)
स्वग्राम एवं सधनोपि मूर्खः ।
वैद्योपदेशे खलु तंत्रमंत्रो,
भक्तिश्च शक्तिः सचिवोपि सैन्यः ॥ ४२ ॥

यत्रास्ति तत्रैव गिरिर्गृहादि—
धानीति मानी विपरीत वेषी ।
ज्ञानं सदैकं निखिल प्रदेशे,
प्रपूज्यते सर्व नरामरेन्द्रैः ॥ ४३ ॥

રાજા પોતાના દેશમાંજ પૂજાય છે, સુપુત્ર અને કુપુત્ર પોતાના ઘરમાંજ પૂજાય છે, ધનવાન અને મૂર્ખ પોતાના ગામમાંજ પૂજાય છે. વૈદ્ય, મંત્રતંત્ર, ભક્તિ, શક્તિ, મૈત્રી, સેના વગેરે દેશના થોડાક ભાગમાંજ પૂજાય છે (મનાય છે). પર્વત, મકાન, દાની પુરૂષ, અભિમાની અને જુદા જુદા વેષ ધારણ કરવાવાળા જ્યાં જ્યાં રહે છે ત્યાં ત્યાંજ પુજાય છે. પરંતુ એક જ્ઞાન (સાચું) અને જ્ઞાની દરેક દેશમાં અને ઇંદ્રો નરેંદ્રો વડે પણ હંમેશાં પૂજાય છે.

अनात्मबुद्धि विषम व्यथादां,
दूरीकरोत्येव मदादिमायाम् ।
ज्ञानं सदैकं निखिल प्रदोषं,
भस्मी करो तीव तृणं हि वह्निः ॥ ४४ ॥

गाढं हि चाज्ञानतमो विहन्ति,
स्वात्म प्रकाशं विशदी करोति ।
रागादि बुद्धि विषयस्य वांच्छां,
नष्टी करोतीव तमो हि भानुः ॥ ४५ ॥

જેવી રીતે અગ્નિ ઘાસના સમૂહને પણ બાળી નાખે છે, તેવી રીતે આ એક સમ્યગ્જ્ઞાન ઘોરાતિઘોર દુઃખોને ઉપસ્થિત કરવામાં જે કારણભૂત છે તેવી અનાત્મ બુદ્ધિને (આત્મા કોઇ પદાર્થ નથી આવા પ્રકારની કુબુદ્ધિને) નષ્ટ પમાડે છે, મદ. (અહંકાર) મોહ, (લાલસા–પ્રેમ) અને માયા (છળકપટ) એ ત્રણે દુર્ગુણોને નાશ પમાડે છે, (દૂર કરે છે.) આત્માના પ્રકાશને તેજોમય બનાવે છે તથા રાગદ્વેષ રૂપી બુદ્ધિનો અને વિષયોની ઇચ્છાઓનો સર્વથા નાશ કરે છે.

विज्ञानतो ह्येव यथार्थ मार्गो,
विबुध्यते भ्रांति हरं स्वतत्वम् ।
स्वाचार वृद्धिः परिणाम शुद्धिः,
स्वर्मोक्षदाः स्यात्परलोक सिद्धिः ॥ ४६ ॥
विज्ञानतो ह्येव मनः पवित्रं,
श्रद्धापि शुद्धा भवति स्वधर्मे ।
उदारभावः स्वपरात्म शुद्धिः,
सुर्योदयादेव सुमार्ग शुद्धिः ॥ ४७ ॥

જેવી રીતે સુર્યોદય થવાથી શ્રેષ્ઠ માર્ગની શુદ્ધિ થઇ જાય છે, તેવી રીતે આ સમ્યગ્જ્ઞાનથી યથાર્થ મોક્ષમાર્ગનું જ્ઞાન થાય છે, ભ્રમહરણ કરવાવાળા આત્મતત્વનું જ્ઞાન થાય છે, સમ્યક્ચરિત્રની વૃદ્ધિ થાય છે, પરીણામો શુદ્ધ થાય છે, અને સ્વર્ગમોક્ષ આપવાવાળી પરલોકની સિદ્ધિ થાય છે. આ આત્મજ્ઞાનથી મન પવિત્ર થાય છે, આત્મધર્મની શ્રદ્ધા શુદ્ધ બને છે, ઉદાર ભાવોનુ આવાગમન થાય છે અને પોતાના આત્માની તથા અન્ય જીવોની શુદ્ધિ પ્રાપ્ત કરી શકાય છે.

आद्यन्त हीनोपि विनाश हीनो,
विघ्नादिमुक्तः श्रमखेद दूरः
चिदात्मकः शाश्वत सौख्य रुपः
ज्ञानैर्विना नैव भवेद्धि मोक्षः ॥ ૪૮ ॥

મોક્ષનુ સ્વરૂપ આદિ (શરૂઆત) તથા અંત રહિત છે, વિનાશ રહિત છે, સર્વ પ્રકારનાં વિઘ્નો અથવા અંતરાયોથી રહિત છે, શુદ્ધ ચૈતન્ય સ્વરૂપ છે અને અમર (કાયમ) રહેવાવાળું અનંત સુખમય છે, આવો આ મોક્ષ પદાર્થ સમ્યગ્જ્ઞાન સિવાય કદી મેળવી શકાતો નથી.

दाने प्रवृत्तिः शशितुल्य कीर्ति—
रन्यायहर्त्री वरराज्य नीतिः ।
धर्मार्थ कामस्य शिव प्रदस्य.
ज्ञानैर्विना स्यान्न कदापि सिद्धिः ॥ ૪૯ ॥

આ સમ્યગ્જ્ઞાન સિવાય દાન કરવાની પ્રવૃત્તિ થતી નથી, ચંદ્રમા સમાન નિર્મળ કીર્તિ પ્રસરતી નથી, અન્યાયને દૂર કરવાવાળી શ્રેષ્ઠ રાજ્યનીતિ પણ પ્રાપ્ત થઇ શકતી નથી અને મોક્ષ આપનાર ધર્મ અર્થ, અને કામ, એ ત્રણે પુરૂષાર્થોની સિદ્ધિ પણ પ્રાપ્ત થતી નથી.

ભાવાર્થ:—એ દરેક વસ્તુ સમ્યગ્જ્ઞાનથીજ મેળવાય છે.

विज्ञानिनो दीर्घ विचारिणो हि,
वशं प्रयात्येव नरामरेन्द्रः ।
सर्वापि वांछा सफला भवेद्वा
ह्यसाध्य कार्योपि भवेत्सुसाध्य ॥ ૫૦ ॥

तीव्राधि तृष्णा विषमापि पीडा,
दुष्ट ग्रहः क्रूर पिशाच वर्गः ।
ददाति दुःखं न ततः कदापि,
ज्ञानस्य लोके महिमा ह्यचिन्त्यः ॥ ५१ ॥

જે પુરૂષ ઉંડા વિચાર કરવાવાળો સમ્યગ્જ્ઞાની છે તેનું પ્રભુત્વ ઇંદ્રિ નરેંદ્રો પણ માને છે અને તેના વશમાં તેઓ અને બીજાઓ પણ રહે છે. તેની દરેક ઇચ્છા ફળીભૂત અને પૂર્ણ થાય છે, અને અસાધ્ય (જે મેળવી ન શકાય તેવી) વસ્તુ પણ તે સહેલાઇથી મેળવી શકે છે. આવી રીતે જ્ઞાની પુરૂષને તીવ્ર તૃષ્ણા (લાલસા) પણ દુઃખ આપી શકતી નથી, દુષ્ટ ગ્રહ અને પિશાચોનો સમૂહ પણ દુઃખ આપી શકતો નથી. વધારે કયાં સુધી કહેવાય. આ સંસારમાં સમ્યગ્જ્ઞાનનો અચિંત્ય (અનુપમ) મહિમા છે.

मनो निरोधि मदन प्रणाशी,
वांछा विरोधी भुवन प्रकाशी ।
सम्यग्विधायीति विपक्षीनाशी,
द्वेषप्रलोपी समता प्रदर्शी ॥ ५२ ॥

पाप प्रणाशी परपुण्य दर्शी,
चाहार निद्रादि समूल हारी ।
सुज्ञान भूपश्च शिव प्रदोस्ति,
श्री कुंथुनाम्ना मुनिने ति चोक्तम् ॥ ५३ ॥

આ સમ્યગ્જ્ઞાન રૂપી રાજા મનનો સામનો કરવાવાળો છે (મનને સંયમમાં રાખવાવાળો છે), વિષયનો નાશ કરવાવાળો છે, દરેક પ્રકારની ઇચ્છાઓને રોકનાર છે, ત્રણે લોકોને

ઉર્ધ્વલોક, મધ્યલોક અને અધોલોકને) પ્રકાશીત કરવાવાળો છે, ઐશ્વર્ય એટલે સંપત્તીને વધારનાર છે, સમસ્ત દુઃખો અથવા આપત્તીઓનો નાશ કરનાર છે, દ્વેષનો (ઇર્ષાનો) લોપ કરનાર છે, સમતા પ્રદર્શીત કરવાવાળો છે, સમસ્ત પાપોનો નાશ કરનાર છે. શ્રેષ્ઠ પુણ્યને વધારનાર છે, આહાર, નિદ્રા વગેરે દોષોને સર્વથા નાશ કરવાવાળો છે અને મોક્ષ આપનાર છે. આ પ્રમાણે આચાર્યશ્રી કુંથુસાગરજી મહારાજે કહ્યું છે.

ज्ञानं नराणां हि यथार्थ नेत्रं,
बाधादि मुक्तं विशदं पवित्रं ।
द्रव्यादि पर्याय गुणं यथावत्,
स्थुलादि सूक्ष्मं सकलं च वस्तु ॥ ५४ ॥

प्रकाशयत्येव यथार्थधर्मं,
यथा हि भानुर्भुवन त्रयं च ।
सर्वार्थ सिद्धे स्ततएव हेतु—
र्ज्ञानं च ह्यानन्द पदस्य चोक्तम ॥ ५५ ॥

આ સમ્યગ્જ્ઞાન જ સમસ્ત વિઘ્નોથી રહિત, વિશાળ પવિત્ર અને પરીપૂર્ણ રીતે મનુષ્યનું નેત્ર છે. જેવી રીતે સૂર્ય સમસ્ત દ્રવ્યોને પ્રકાશીત કરે છે, તેવી રીતે આ સમ્યગ્જ્ઞાનરૂપી નેત્ર પણ દ્રવ્યગુણ પર્યાયોને, સ્થૂળ, સુક્ષ્મ વગેરે સર્વ પદાર્થોને પરીપૂર્ણ રીતે પ્રકાશીત કરે છે. તે ઉપરાંત તે જ્ઞાનથી નેત્ર પરીપૂર્ણ રીતે ધર્મને અને ત્રણે લોકોને પ્રકાશીત કરે છે. એટલા માટે આ સમ્યગ્જ્ઞાન સમસ્ત પદાર્થોની સિદ્ધિનું કારણ છે. આવી રીતે આચાર્યવર્યશ્રીએ કહ્યું છે.

सर्वापहारी पशु वद्धि हारी,
कुकर्मकारी च मनोविकारी ।
सदा प्रलापी च विवेक हीनः,
धर्मार्थशून्यो व्यवहार मूढः ॥ ५६ ॥

नष्टात्म बुद्धिः स्वपरात्मघाती,
स्वाचार लोपी ह्यविचारमूर्तिः ।
ज्ञानेन हीनो भवतीह जीवः,
मन्ये ततोऽहं पशुतः पशुः सः ॥ ५७ ॥

જે મનુષ્ય અથવા જીવ આત્મજ્ઞાનરહિત છે તે દરેક પદાર્થને જેવી તેવી રીતે ગ્રહણ કરે છે, પશુઓની માફક આહાર વિહાર (ખાવું, પીવું, ફરવું વગેરે) કરે છે, અનેક કુકર્મો કરે છે, મનમાં અનેક વિકાર (ભ્રમ) પેદા કરે છે, સદા વિલાપ કરે છે, વિવેક રહિત છે, ધર્માદિકમાં શૂન્યવત્ હોય છે, વ્યવહારમાં મૂર્ખાઈ ધારણ કરે છે, પોતાની બુદ્ધિનો નાશ કરી દે છે, પોતાના આત્માનો અને અન્ય જીવોનો પણ ઘાત કરી નાખે છે, પોતાનાં સત્કાર્યોને પણ નાશ કરી નાખે છે અને તેનામાં વિચાર માત્રનો છાંટો પણ રહેતો નથી. એટલા માટે હું (આચાર્ય કુંથુસાગર મહારાજ) એમ માનું છું કે તે જ્ઞાનહીન મનુષ્ય પશુઓથી વધીને પણ પશુ છે. (પશુ કરતાં પણ નીચ કોટીમાં ગણાય છે).

ज्ञानेन मर्त्यो मरणस्य जेता,
भवत्यवश्यं व्यवहार दक्षः ।
कला प्रचारी ह्यकला पहारी,
कीर्तिप्रसारी ह्यप कीर्तिहारी ॥ ५८ ॥

सत्कार योगयोपि नरामरेन्द्रैः,
प्रपूजनीयो हृदि धारणीयः ।
मुक्ति प्रियायाः सुखशांति दात्र्याः,
स्वामि प्रियः स्याद्धि नरोत्तमाणाम् ॥ ५९ ॥

આ સમ્યગ્જ્ઞાનથી મનુષ્ય જરૂર જન્મમરણને જીતવાવાળો થાય છે, વ્યવહારમાં જરૂર ચતુર થઈ જાય છે, અનેક કળાઓનો પ્રચાર કરે છે. ખરાબ કળાઓનો નાશ કરે છે, કીર્તિ ફેલાવે છે, અપકીર્તિનો નાશ કરે છે, ઇન્દ્રનરેંદ્ર વગેરેથી આદર સત્કાર મેળવવા માટે યોગ્ય અને પૂજ્ય બને છે, સર્વે જીવો સ્મરણ કરે એવી લાયકાત પ્રાપ્ત કરે છે, તથા અનંત સુખ અને શાંતિ આપવાવાળી મોક્ષરૂપી સ્ત્રીનો સ્વામી બની જાય છે અને મનુષ્ય ધરણેંદ્ર વગેરેનો સ્વામી બની જાય છે.

ज्ञानेन हीनस्य नराधमस्य,
व्रतो प वासो हि तपो जपोपि ।
ध्यानं च मौनं च दया क्षमादि,
र्चार्ता प्रवृत्तिर्मननं विचारः ॥ ६० ॥

गतिर्मनोज्ञा मधुरापि वाणी,
वा धारणाध्येविधिक्रियादिः ।
न शोभते रूपकलादियोगो,
यथैव रात्रिः किलचन्द्रहीना ॥ ६१ ॥

જેવી રીતે ચંદ્રમા સિવાયની રાત્રી શોભાયમાન હોતી નથી, તેવી રીતે જ્ઞાન સિવાયના નીચ મનુષ્યોના વ્રત, ઉપવાસ, જપ, તપ, ધ્યાન, મૌન, દયા, ક્ષમા, ચર્ચા પ્રવૃત્તિ, મનન,

વિચાર, મનોહર ગતિ, વાણી, ધારણા, ધ્યેય, વિધિ, ક્રિયા, રૂપ અને કળા વગેરે બિલકુલ શોભા આપતાં નથી.

विज्ञानहीनस्य नराधमस्य,
भ्रान्तिप्रदाद्यो ह्यहिताद्विरक्तिः ।
हितेः प्रवृत्तिर्न समीहितार्थे,
दुःखप्रदान्नैव भवाद्विमुक्तिः ॥ ६२ ॥

स्वानन्दवासे हि निजप्रदेशे,
गतिः स्थितिर्नैव भवेत्कदापि
प्रदीपहीने तमसातिकीर्णे,
गृहे यथा नैव जनप्रवेशः ॥ ६३ ॥

જેવી રીતે દીવા સિવાયના અંધારા ઘરમાં કોઇ મનુષ્ય પ્રવેશ કરી શકતો નથી, તેવી રીતે સમ્યગ્જ્ઞાન રહિત નીચ મનુષ્ય ભ્રમ ઉત્પન્ન કરવાવાળા અહિતથી કદી પણ વિરક્ત થઇ શકતો નથી, પોતાના હિતમાં પ્રવૃત્તિ કરી શકતો નથી, પોતાની ઇચ્છા મુજબ પદાર્થોમાં પ્રવૃત્તિ કરી શકતો નથી. આવી રીતે તે અનંત સુખ આપનાર મોક્ષ તરફ કદી ગમન કરી શકતો નથી અને કદી પોતાના આત્મપ્રદેશોમાં રહી શકતો નથી.

अत्यल्पवस्त्वेव बहिः स्थितं च,
स्वक्षेत्रलब्धं हि शशीत सूर्यः ।
प्रकाशयत्येव च दीपतारा,
ज्ञानं त्रिलोकं त्रिविधं त्रिकालम् ॥ ६४ ॥

पर्यायसत्वं विगतान्तरायं,
सुखप्रदं सर्वपदार्थधर्मम् ।
मन्ये ततो ज्ञानसमं त्रिलोके,
नैवान्यवस्तु प्रबलं विशुद्धम् ॥ ६५ ॥

આ સંસારમાં સૂર્ય અને ચંદ્રમા પદાર્થોને પ્રકાશીત કરે છે; પરંતુ બહુજ થોડા પદાર્થોને અને ખાસ કરીને તેના બાહારના ભાગને પ્રકાશીત કરે છે તથા પોતાના સ્થાનમાં પ્રાપ્ત થએલ પદાર્થોનેજ પ્રકાશીત કરે છે. દીપક અથવા તારાઓ પણ થોડા પદાર્થોના બાહારના ભાગને પ્રકાશીત કરે છે તથા પોતાના સ્થાનમાં આવેલ પદાર્થોનેજ પ્રકાશીત કરે છે; પરંતુ આ સમ્યગ્જ્ઞાન ત્રણે લોકોમાં આવેલા સમસ્ત પદાર્થોને પ્રકાશીત કરે છે, તથા ભૂત, ભવિષ્ય અને વર્તમાન એ ત્રણે કાલો સંબંધી સમસ્ત પર્યાયોને તથા એ સમસ્ત પદાર્થોની આદિ (શરૂઆત) મધ્ય અને અંત વગેરે સમસ્ત ભાગોને પ્રકાશીત કરે છે. એવી રીતે તે સમ્યગ્જ્ઞાન કોઇ પણ પ્રકારના વિઘ્ન સિવાય સુખ આપવાવાળા સમસ્ત પદાર્થોના ધર્મને પણ પ્રકાશીત કરે છે. ખરેખર મારે (ગ્રંથકર્તા કુંથુસાગર મહારાજે) માનવું પડે છે કે ત્રણે લોકોમાં આ જ્ઞાન સિવાય બીજો કોઈ પણ પદાર્થ બળવાન અને વિશુદ્ધ નથી. સમ્યગ્જ્ઞાન એજ સૌથી વધારે બળવાન અને વિશુદ્ધ છે.

ज्ञानं च लब्ध्वापि शिवप्रदं ये,
धर्मार्थकार्ये नरजन्म कृत्यम ।
शांतिप्रदं तत्वविचारमेवान्-
त्वहं मिथो राज्यपदादि बीजम ॥ ६६ ॥

कुर्वन्ति नानन्दरसस्यपानं,
स्वर्मोक्षमूलां कुलजातिरक्षाम ।
मुर्खेषु मुख्याश्च तएव लोके,
मन्ये ततोहं सकलेषु दुष्टाः ॥ ६७ ॥

જે મનુષ્ય મોક્ષ આપવાવાળા સમ્યગ્જ્ઞાનને મેળવીને પણ મનુષ્ય જન્મમાં કરવા લાયક ધર્માર્થ કાર્યોને કરતો નથી, મોક્ષરૂપી રાજ્ય મેળવવામાં કારણભૂત અને શાંતિ ઉત્પન્ન કરવાવાળા તત્વ વિચારોને પરસ્પર ચર્ચતો નથી, આત્મિક આનંદરસનું પાન કરતો નથી, અને સ્વર્ગ મોક્ષાદિ અણિમા મહિમા પ્રાપ્ત કરવામાં કારણભૂત એવા કુળ તથા જાતિની રક્ષા કરતો નથી તે મનુષ્ય આ સંસારમાં મૂર્ખનો સરદાર (વધારે મૂર્ખ) ગણાય છે તથા હું (આચાર્ય કુંથુસાગર મહારાજ) તેને ત્રણે લોકોમાં અત્યંત દુષ્ટ માનું છું.

ज्ञानं विना मोक्षपदं पवित्रं,
सुखप्रदं वांच्छति यो ह्युपेतम् ।
पुण्यं विना राज्यपदं ह्युपेतुं,
मुखं विना वांच्छति सो हि वक्तुम् ॥ ६८ ॥

धर्मं विना द्रव्यनिधिं ह्युपेतु,
पादौ विना वांच्छति सोपि गन्तुम् ।
रुपादि वर्णं च विना हि नेत्रैः,
मन्ये ततो वांच्छति द्रष्टुमेव ॥ ६९ ॥

જે મનુષ્ય આત્મજ્ઞાન સિવાય સુખ આપનાર પવિત્ર મોક્ષપદ મેળવવા ઈચ્છા રાખે છે તેવા મનુષ્ય માટે હું (ગ્રંથકર્તા) એમ માનું છું કે તે પુણ્ય સિવાય આત્મિક સ્વરાજ્ય (મોક્ષ)

મેળવવા ચાહે છે, મુખ સિવાય બોલવાનું ચાહે છે, ધર્મ સિવાય દ્રવ્ય અને નવ નિધિઓ મેળવવા ચાહે છે, પગ સિવાય ચાલવાનું ચાહે છે અને આંખો સિવાય રૂપ વગેરે વર્ણોને દેખવા ચાહે છે.

ज्ञानेन युक्तस्य नरोत्तमस्य.
श्रेष्ठैव नीतिर्जनरक्षिका या ।
सर्वार्थसिद्धिः स्वपरात्मशुद्धिः
भवत्यवश्यं हि भवस्य नाशः ॥ ७० ॥

विज्ञानहीनस्य पराश्रितस्य.
भवत्यनीतीर्जन दुःखदा या ।
सर्वार्थनाशः कलहप्रचारः.
मदापमानो पदे पदे स्यात ॥ ७१ ॥

જે સમ્યગ્જ્ઞાની છે તે ઉત્તમ માણસ કહેવાય છે. તેની નીતિ હંમેશાં શ્રેષ્ઠ અને લોકોની રક્ષા કરવાવાળી હોય છે તથા સમસ્ત પદાર્થોની સિદ્ધિ કરવાવાળી છે, અન્ય જીવોની પણ શુદ્ધિ થાય અને તેઓના જન્મમરણરૂપ સંસારનો જરૂર નાશ થઈ જાય છે. જે મનુષ્ય સમ્યગ્જ્ઞાનથી રહિત છે તેની નીતિ લોકોને દુઃખ આપનારી છે. તેના સર્વે પદાર્થો નાશ પામે છે, તેનાથી હંમેશાં કલહનો જ પ્રચાર થાય છે અને ડગલે ડગલે તેનું અપમાન થાય છે.

अग्नौ पतित्वा च विषं गृहीत्वा.
व्याघ्रादिसिंहस्य मुखे ह्युसित्वा ।
वरं यदि स्यान्मरणं कदाचित.
श्वभ्रेऽपि भीमे भ्रमणं निगोदे ॥ ७२ ॥

विज्ञानहीनं नरजीवनं त्र,
श्रेष्ठं भवेन्नैव कदापि लोके ।
ज्ञात्वेति भव्या ममशत्रवोपि,
विज्ञानहीनाश्च कदापि न स्युः ॥ ७३ ॥

જો કદાચ અગ્નીમાં પડવાથી મારૂં મરણ થાય તોપણ ઠીક, ઝેર ખાવાથી મરણ થાય તો પણ ઠીક, ભયાનક વાઘ, અથવા સિંહના મોંમાં પ્રવેશ કરવાથી મરણ થાય તો પણ ઠીક, અને જો ભયાનક નરક અથવા નિગોદમાં પરિભ્રમણ કરવું પડે તો પણ ઠીક; પરંતુ જ્ઞાન સિવાયનું જીવન આ સંસારમાં કદી શ્રેષ્ઠ કહી ન શકાય, એમ સમજીને ભવ્ય જીવોએ ભલે તે મારા (ગ્રંથકર્તાના) શત્રુઓ હોય તો પણ જ્ઞાન સિવાયનું (જ્ઞાન રહિત) કદી રહેવું ન જોઇએ. (અવશ્ય) સમ્યગ્જ્ઞાન પ્રાપ્ત કરવા માટે પ્રયત્ન કરવો જ જોઇએ જેથી આત્માનું કલ્યાણ થાય).

विज्ञानहीनस्य जनस्य लोके,
धर्मोपदेशः समता सुशीलः ।
ऐश्वर्यशौर्यं ह्यविलंघनीय,
कान्तिः सुशान्तिः प्रविशंसनीया ॥ ७४ ॥
क्रियाकलादिश्च मनोहरोपि,
भक्त्यादिशक्तिर्वश कारिणी वा ।
अन्योपि योगो विफलो हि सर्वो,
भवेद्ध्रुवं ज्ञानरवेर्विना कौ ॥ ७५ ॥

જેવી રીતે આ પૃથ્વિ ઉપર સૂર્ય વિના બધાં જ કાર્યો

નિષ્ફળ થઇ જાય છે, તેવીજ રીતે સમ્યગ્જ્ઞાન રહીત મનુષ્યનો ધર્મોપદેશ, સમતા. સુશીલતા (સદાચરણો), જેનું કોઇ ઉલ્લંઘન ન કરી શકે એવી ઐશ્વર્ય અને શૂરવીરતા અત્યંત પ્રસંશાને પાત્ર કાંતિ અને શાંતિ, મનોહર ક્રિયાઓ તથા કલામાં ચાતુર્યતા, દરેકને વશ કરવાવાળી ભક્તિ અને શક્તિ તથા તે ઉપરાંત જે જે યોગ અથવા કાર્ય છે તે દરેક જ્ઞાનરૂપી સૂર્ય સિવાય નિષ્ફળ થઇ જાય છે.

सुज्ञाययुक्ताय नरोत्तमाय
याद्दक्सुखं वांच्छितदं यथेष्टम ।
ज्ञानं ददातीह गतान्तरायं
ताद्दक्सुखं नैव नरामरेंद्रः ॥ ७६ ॥

पिता न माता भगिनी न भार्या
मित्रं न पुत्रो न च बंधुवर्गः ।
मामन्तवर्गोऽपि न भूपवर्गो
यक्षो न यक्षी न च मंत्रतंत्रम् ॥ ७७ ॥

જે મનુષ્ય સમ્યગ્જ્ઞાનથી સુશોભિત હોવાથી ઉત્તમ મનુષ્ય કહેવાય છે તેને સમ્યગ્જ્ઞાન કોઇ પણ પ્રકારનાં વિઘ્નો રહિત સમસ્ત ઇચ્છાઓને પૂર્ણ કરવાવાળા મનપસંદ સુખો આપે છે. તેવું સુખ ઇંદ્રો પણ આપી શકતા નથી, નરેંદ્રો પણ આપી શકતા નથી, માતાપિતા આપી શકતાં નથી, બહેન અથવા સ્ત્રી પણ આપી શકતી નથી, મિત્ર અથવા પુત્ર પણ આપી શકતો નથી, ભાઈ વગેરેનો સમૂહ પણ આપી શકતો નથી, મંત્રીઓનો સમૂહ પણ આપી શકતો નથી, રાજાઓનો સમૂહ પણ આપી

શકતો નથી, રાક્ષસ અથવા રાક્ષિણિ પણ આપી શકતી નથી અને કોઇ મંત્રતંત્ર પણ આપી શકતો નથી.

ભાવાર્થ:—સમ્યગ્જ્ઞાનથી જેટલું સુખ મળે છે તેટલું બીજી કોઇ પણ વસ્તુથી મળી શકતું નથી.

देवादिधर्मं न पुराणशास्त्रं
नेहोन्यलोकं कुलगोत्रजाभिम ।
पापं न पुण्यं न मनुष्यभेदं
न जन्ममृत्युं नरकं निगोदम् ॥ ७८ ॥

बंधादिमोक्षं न विधिं निषेधं
गुरुं न जीवस्य गतिस्थितिं वा ।
न मन्यते मूर्खजनः स चेत्थं
मन्ये ततस्तं भुवि पापमूर्तिम् ॥ ७९ ॥

જે મનુષ્ય આત્મજ્ઞાનથી રહિત છે તે દેવ, શાસ્ત્ર, ગુરૂને પણ માનતો નથી, શાસ્ત્ર પુરાણોને પણ માનતો નથી, પરલોકને પણ માનતો નથી, પુણ્ય પાપને પણ માનતો નથી. મનુષ્યોમાં કોઇ પણ પ્રકારનો ભિન્નભાવ રાખતો નથી, જન્મમરણને પણ માનતો નથી, નરક નિગોદને પણ માનતો નથી, બંધ અને મોક્ષને પણ માનતોનથી. વિધિ અથવા નિષેધને (ખંડનને) પણ માનતો નથી, અને જીવની ગતિ અથવા સ્થિતિને પણ માનતો નથી. એટલા માટે એ અજ્ઞાનીને હું (આચાર્ય કુંથુસાગર મહારાજ) ફક્ત પાપની ખાણ જ સમજું છું.

मिथ्यात्वभावं भववंधमूलं,
भ्रान्तेश्च बीजं विषयाभिलाषम् ।
ज्ञान्येव पापं त्यजति व्यथादं,
यथा हि भानुश्च तमःप्रपंचं ॥ ८० ॥

गतस्पृहं वांछितदं तपोपि,
जिनोक्तमार्गं सुखशांतिदं हि ।
ज्ञान्येव गृह्णाति दयाक्षमादि,
साध्वीव शीलं शिवसौख्यमूलम् ॥ ८१ ॥

જેવી રીતે સૂર્ય અંધકારને દૂર કરે છે. તેવી રીતે જ્ઞાની પુરૂષ પણ મિથ્યાત્વરૂપી પરિણામોનો ત્યાગ કરી દે છે, સંસાર બંધનોના મુખ્ય કારણોનો (ક્રોધ, માન. માયા અને લોભ વગેરેનો) ત્યાગ કરી દે છે, ભ્રમ ઉત્પન્ન કરે તેવા કારણોનો નાશ કરી દે છે, વિષયસુખની લાલસાને ત્યજી દે છે અને દુઃખ આપનાર સમસ્ત પાપોને પણ ત્યજી દે છે—ભગાવી દે છે. તથા જેવી રીતે શીલવંતી સ્ત્રી મોક્ષસુખના કારણભૂત શીલવ્રતને ધારણ કરે છે, તેવી રીતે જ્ઞાની પુરૂષ પણ દરેક પ્રકારની ઇચ્છાઓથી રહિત અને ઇચ્છાનુસાર ફળ આપનાર તપશ્ચરણને ધારણ કરે છે, ભગવાન જીનેંદ્ર દેવે કહેલ સુખ અને શાંતિ આપનાર મોક્ષમાર્ગને ધારણ કરે છે. અને દયા, ક્ષમા વગેરે આત્માના ગુણોને પણ ધારણ કરે છે.

ज्ञानान्धजीवः किमपि स्वदोषं,
ज्ञातुं न शक्नोति च वस्तु किंचित् ।
ज्ञानांधजीवोस्ति सदैव चांधो,
मन्ये ततोहं परमार्थदृष्ट्या ॥ ८२ ॥

यो ज्ञानहीनो सच हीन ऐव.
स ऐव दीनोप्यखिले पदार्थे।
स्यानन्दतृप्तेन सुखाश्रितेन,
श्री कुंथुनाम्ना मुनिनेति चोक्तम् ॥ ८३ ॥

જે જીવ જ્ઞાનમાંજ અંધ છે (જ્ઞાનનો ગર્વ કરે છે), તે જીવ પોતાના કોઈ પણ દોષને અથવા કોઈ પણ પદાર્થને જાણવામાં સમર્થ થઈ શકતો નથી. એટલા માટે હું (ગ્રંથકર્તા આચાર્ય કુંથુસાગર મહારાજ) તો એટલું જ માનું છું કે જે જીવ જ્ઞાનથી અંધ થએલ છે(જ્ઞાનનો ગર્વ કરે છે) તે પરમાર્થ દૃષ્ટિથી આંધળો જ છે. આ સંસારમાં જે પુરૂષ અજ્ઞાની (સાચા જ્ઞાનને જાણ્યા સિવાય) રહે છે તે સર્વથા ધિક્કારને પાત્ર છે, તથા તે જ પુરૂષ સમસ્ત પદાર્થોમાં ગરીબ અથવા શક્તિહિન ગણાય છે. આવી રીતે પોતાના આત્મિક આનંદમાં તૃપ્ત રહેવાવાળા અને આત્મજન્ય સુખોને આશ્રયે રહેનાર આચાર્યશ્રી કુંથુસાગરજી મહારાજે નિરૂપણ કર્યું છે.

ग्रन्थं ह्यमुं भूवि पठन्ति च पाठयन्ति
तेभ्यः सदा जिनवरोऽखिल सूरिवर्गः।
आचार्यशांतिजलधिश्च सुधर्मसूरिः
मोक्षं सदात्मसुखदं विदधातु वस्तु ॥ ८४ ॥

આ દુનિયામાં આ ગ્રંથને જે પોતે વાંચે છે અને બીજાઓને વંચાવે છે તેને જીનોત્કૃષ્ટ અરહંત સિદ્ધ પરમેષ્ઠી, ભગવાન મહાવીર પછી થએલ સમસ્ત આચાર્ય વર્ગ અને ચારિત્ર ચક્રવર્તી શાંતિસાગરજી અને સુધર્માચાર્ય હંમેશાં

આત્માને સુખ આપવાવાળી મોક્ષરૂપી સામ્રાજ્ય લક્ષ્મી (મોક્ષ-રૂપી વસ્તુ) આપે એવી મારી (ગ્રંથકર્તાની) પ્રાર્થના છે.

लघुज्ञानामृतसारोयं ग्रन्थः प्रोक्तः च शर्मदः ।
शान्तिसागर शिष्येण कुंथुसागर सूरिणाः ॥ ८५ ॥

આ લઘુજ્ઞાનામૃત સારને (જે સમસ્ત જીવો માટે સુખ-રૂપ છે તેને) ચારિત્ર ચક્રવર્તી આચાર્ય શાંતિસાગરજીના શિષ્ય કુંથુસાગર નામના આચાર્ય મહારાજે રચ્યું છે.

— समाप्तोयं ग्रन्थः —

અંતિમ નિવેદન

પરમપૂજ્ય વિદ્વદ્વર્ય આચાર્ય શ્રી કુંથુસાગર મહારાજે જ્ઞાનામૃતસાર સંસ્કૃતમાં રચ્યું છે. તેની હિન્દી ટીકા પં. લાલારામજીએ કરી છે પણ તેવા મોટા પુસ્તકનો જૈન તથા જૈનેતરવર્ગ લાભ ન ઉઠાવી શકે કારણ કે તેવા પુસ્તકનું વિતરણ છપામણીના પૈસાના અભાવે આખા જૈન સમાજમાં તેમજ જૈનેતર વર્ગમાં થવું અસંભવિત છે. તેથી તેના સારરૂપ ગુજરાતી ભાષામાં અર્થસહિત ગ્રંથની જરૂરીઆત ઘણા સમયથી જણાતી હતી. તેથી સમસ્ત જીવોના આગ્રહથી તથા મારી વારંવાર પ્રાર્થના કરવાથી આ "લઘુજ્ઞાનામૃતસાર" સંસ્કૃતમાં ગ્રંથકર્તાએ રચ્યું છે. તેનું ગુજરાતી ભાષાંતર હીંદી અર્થ ઉપરથી કર્યું છે તેમાં જે જે ત્રુટીઓ રહી ગઈ હોય તે વિદ્વદ્ગણ સુધારી લેશે અને ક્ષમા આપશે એવી મારી આશા છે.

વળી શ્રીમાન ધર્મપરાયણ શેઠશ્રી આશાલાલ એન્ડ શંકરભાઈએ પોતાના સ્મણાર્થે તથા જ્ઞાનાવરણિ કર્મક્ષયાર્થે જે લાંબા કાળથી ખોટ જણાતી હતી તે ખોટની આ ગ્રંથ છપાવીને પૂર્તિ કરી જે જીનવાણીની અપૂર્વ સેવા કરી છે તે માટે ખરેખર તેમને ધન્યવાદ ઘટે છે. આવાં અનેક ધાર્મિક કાર્યો શેઠશ્રીએ કરેલ છે. અંતમાં હું વીરપ્રભુ પ્રત્યે પ્રાર્થના કરૂં છું કે શેઠશ્રીને આવી બુદ્ધિ હરહંમેશને માટે આપે અને તેમને દીર્ઘાયુષ્ય બક્ષે એજ.

ડૉ. ભાઇલાલ કપુરચંદ શાહ.

શ્રીમત્પરમ પુજ્ય આચાર્ય શ્રી ૧૦૮ કુન્થુસાગરજી મહારાજ રચીત બીજાં પુસ્તકો:—

શ્રીમાન ધર્મપરાયણ શા. આશાલાલ એન્ડ શંકરલાલ તરફથી મુનીશ્રી ૧૦૮ કુંથુસાગરજીના કેશલોચ વખતે જ્ઞાનાવરણિ કર્મક્ષયાર્થે આ ગ્રંથ છપાવીને જૈનવાણીની અપૂર્વ સેવા કરી છે તે માટે અરેખર તેમને ધન્યવાદ ઘટે છે. આવાં અનેક ધાર્મિક કાર્યો શ્રીમાનો કરશે. અંતરમાં હું વીર પ્રભુ પ્રત્યે પ્રાર્થના કરૂં છું.

મુદ્રક:— મનોરભાઈ ફુલાભાઇ પટેલ

શ્રી ગોરસદ પ્રી. પ્રેસ—બોરસદ. તા. ૧૧—૪—૪૦